9

जानत क्यौं नहिं रे...

जानत क्यौं नहिं रे,
हे नर आतमज्ञानी।।
रागदोष पुद्गल की संपति,
निहचै शुद्धनिशानी।।जानत.।।टेक।।

जाय नरकपशुनरसुरगति में,
यह परजाय विरानी।
सिद्धसरूप सदा अविनाशी,
मानत विरले प्रानी।।1।।जानत.।।

कियौ न काहू हरै न कोई,
गुरु–शिख कौन कहानी।
जन्म मरन मलरहित विमल है,
कीचबिना जिमि पानी।।2।।जानत.।।

सार पदारथ है तिहुँ जग में,
नहिं क्रोधी नहिं मानी।
'दौलत' सो घटमाहिं विराजे,
लखि हूजे शिवथानी।।3।।जानत.।।

हे मानव! यह आत्मा ज्ञान स्वरूप है, ज्ञानी है। तू यह बात क्यों नहीं जानता है। निश्चय से आत्मा की निशानी तो उसकी शुद्धता ही है । राग–द्वेष पुद्गल के कारण से होते हैं, अत: ये तेरी नहीं बल्कि पुद्गल की सम्पत्ति हैं।।टेक।।

यह जीव नरक, तिर्यंच, मनुष्य व देव गति में जाता है परंतु ये सब पर्यायें अपनी नहीं हैं । कुछ विरले विवेकी पुरुष ही यह जानते हैं कि यह आत्मा सिद्ध स्वरूप है, कभी नाश को प्राप्त नहीं होता।।१।।

कोई किसी का कुछ नहीं करता, किसी का हरण नहीं करता, कौन गुरु है और शिष्य – ये सभी सम्बन्ध कहने मात्र के हैं। जैसे कीचड के बिना पानी निर्मल होता है उसी तरह आत्मा जन्म–मरण के मैल से रहित है, निर्मल है।।२।।

तीन लोक में यह आत्मा ही सार रूप पदार्थ है, जो न क्रोधी है और न ही मानी । पण्डित दौलतरामजी कहते हैं कि वह आत्मा सदैव ही तेरे अंदर में विराजमान है, जिसने उसे देखा, जाना व पहिचाना वह ही मोक्ष को प्राप्त हो जाता है, मोक्ष के निवास को प्राप्त करता है।।३।।